JETIR.ORG ISSN: 2349-5162 | ESTD Year : 2014 | Monthly Issue
JOURNAL OF EMERGING TECHNOLOGIES AND INNOVATIVE RESEARCH (JETIR)
An International Scholarly Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

जीवन के संध्याबेला की समस्याएँ

डॉ महेन्द्र प्रताप तिवारी

विभागाध्यक्ष (समाजशास्त्र),

बजरंग महाविद्यालय कुण्डा, प्रतापगढ़ उत्तर प्रदेश

सारांश:

वृद्धावस्था विविध प्रकार के दुःखों की सुग्राह्य अवस्था है। आधुनिकता अंधाधुंध दौड़ में समाज और परिवार में वृद्धजनों के प्रति सकारात्मक एवं मूल्यपरक दृष्टिकोंण में अवनमन हुआ है। युवा और वृद्धजनों के बीच सकारात्मक अन्तःक्रिया का लोप होता जा रहा है। जहाँ एक ओर वृद्धजनों में लचीलेपन का अभाव है तो दूसरी ओर युवाओं में परंपरागत मूल्यों के प्रति विमुखता का प्रचलन बढ़ रहा है। शिष्टाचार के परम्परागत मूल्यों से दूरी के कारण युवा पीढ़ी वृद्धजनों के साथ सहज एवं सकारात्मक अन्तःक्रिया नहीं कर रही है। प्रजननमूलक परिवार पर ही केन्द्रित होने के कारण युवापीढ़ी के साथ वृद्धजन दीन-हीन दशा में रहने को विवश हैं। आज वृद्धजनों की समाज एवं परिवार में प्रतिष्ठा एवं सम्मान में अवमूल्यन हो रहा है। माता-पिता अपनी संतानों का लालन-पालन तो निःस्वार्थ करते हैं, परन्तु संतति वृद्धजनो की सेवा सुश्रूषा को घाटे का सौदा समझती है। व्यक्तिवादी और उपभोक्तावादी जीवन मूल्य को अपनाने के कारण परिवार को एकजुट करने वाले मूल्यों का प्रभाव कमजोर हुआ है। संयुक्त परिवार से विघटित नाभिकीय परिवारों में भावनात्मक, शारीरिक और आर्थिक सुरक्षा नहीं मिल पाने के कारण वृद्धजनों के समक्ष अनेक जैविक, मनोवैज्ञानिक और सामाजिक समस्याएँ उनकी उत्तरजीविता के लिए विकट चुनौती है। वृद्धजनों का परिवार और समाज में समायोजन की प्रवृत्ति का लोप होता जा रहा है तथा आर्थिक बदहाली एवं परनिर्भरता के कारण वृद्धजन विविध दुखों के दुष्चक्र में उलझने के लिए अभिशप्त हैं। वृद्धजनों से प्रेम, सम्मान, प्रतिष्ठा, सहानुभूतिपूर्वक व्यवहार करने के बजाय युवाजन जहाँ एक ओर उपभोक्तावादी संस्कृति की ओर उन्मुख हो रहा है, वहीं वह वृद्धजनों के अनुभवों से दूर होता जा रहा है। आज के भौतिकवादी परिवेश में संवेगात्मक असंतुलन, परावलम्बन, अकेलापन, अस्वस्थता, शारीरिक दुर्बलता, नातेदारों से उपेक्षा, सामाजिक अन्तःक्रिया से अलगाव और असमायोजन के कारण वृद्धजनों के जीवन की संध्याबेला विविध प्रकार के दुःखों के भँवर में उलझा गया है।

मुख्य शब्द:

जीवन की संध्याबेला, आधुनिकीकरण, लौकिकीकरण, पश्चिमीकरण, प्रजननमूलक परिवार, अकेलापन, अवसाद, उपभोक्तावादी समाज, समायोजन आदि।

प्रस्तावना:

वृद्धावस्था कोई सार्वभौम अवस्था न होकर एक प्रक्रिया है। सामान्यतः वृद्धावस्था के अनेक स्वरूप हैं, जैसे- शारीरिक वृद्धावस्था, मनोवैज्ञानिक वृद्धावस्था, और सामाजिक वृद्धावस्था। वस्तुतः तीनों प्रकार अवस्थाएँ अवियोज्य हैं। वृद्धावस्था का एक प्रकार दूसरे प्रकारों को प्रभावित करने के साथ-साथ दूसरे प्रकारों से प्रभावित भी होता है। शारीरिक वृद्धावस्था शारीरिक जीर्णता और कमजोरी की द्योतक है। बालों का सफेद होना, दातों का गिरना तथा त्वचा में झुर्रियों का पड़ना शारीरिक वृद्धावस्था में स्वाभाविक है। उम्र बढ़ने के साथ वृद्धजनों के शारीरिक अंगों एवं तंत्रों की कार्यक्षमता घट जाती है और उनमें कई व्याधियाँ, जैसे- तनाव, अपच, के साथ-साथ हड्डी, हृदय, मूत्रांग, तंत्रिका, लसिका, रक्तचाप, आँख और कान से संबंधित तंत्रों की बीमारियों के कारण वृद्धों का जीवन

संकटग्रस्त है। मनोवैज्ञानिक वृद्धावस्था मानसिक कार्यक्षमता की जीर्णता और अवसान का प्रतीक है। सामाजिक वृद्धावस्था ऐसी अवस्था है जिसे सामाजिक रूप से मान्यता प्राप्त होती है। समाज में वृद्धावस्था का सरोकार कतिपय सामाजिक-सांस्कृतिक मूल्यों से जुड़ा होता है। समाज द्वारा मान्यता प्राप्त इस अवस्था में प्रस्थिति एवं भूमिका का सुस्पष्ट दायरा होता है।

आधुनिकीकरण, औद्योगीकरण, लौकिकीकरण, आदि के कारण सामाजिक ढ़ाँचे में व्यापक परिवर्तन हुआ है। परिणामस्वरूप वृद्धजनों के प्रति परम्परागत सम्मानसूचक एवं प्रतिष्ठामूलक दृष्टिकोण अवमूल्यन हो रहा है। ऐसे परिवर्तनों के कारण वृद्धजनों में नीरसता, विवशता, अकेलापन, मानसिक विदलन, अलगाव, आदि समस्याएँ जीवन की संध्याबेला को संकटमय बना रही हैं। शारीरिक-मानसिक जीर्णता से वृद्धजन अनेक समस्याओं के दुष्चक्र में फँसते जा रहे हैं। जीवन प्रत्याशा में वृद्धि के कारण भारत ही नहीं, अपितु वैश्विक स्तर पर वृद्धजनों की आबादी बढ़ रही है। बढ़ती हुई आबादी के अनुपात में वृद्धजनों का दूसरों पर निर्भर रहने के अनुपात बढ़ रहा है। आधुनिक चिकित्सा और अन्य आधारभूत सुविधाओं की उपलब्धता के कारण जीवन प्रत्याशा में वृद्धि हो रही है। ऐसे परिवर्तित सामाजिक ढ़ाँचे में वृद्धजनों की बढ़ती आबादी विकट समस्या के रूप में उभर रही है।

उल्लेखनीय है कि भारत में वृद्धजनों के रूप में दादी-दादा, माता-पिता, ऋषि-मुनि आदि को सम्मानित एवं प्रतिष्ठित करने की स्वस्थ्य परम्परा रही है। परिवार में मुखियाँ के रूप में वृद्धजन सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, पारिवारिक कार्यों में सबसे महत्वपूर्ण होते थे। परिवार के सभी सदस्य एक साथ अधिकार एवं कर्त्तव्य के स्वाभाविक एवं संतुलित रूप में जीवन का निर्वाह किया करते थे। औद्योगीकरण, पश्चिमीकरण, नगरीकरण, लौकिकीकरण, आधुनिकीकरण आदि परिवर्तनकारी प्रक्रियाओं के कारण आज सामाजिक संरचना में व्यापक परिवर्तन हुआ है। युवा पीढ़ी में परंपरागत मूल्यों और मान्यताओं के प्रति अरुचि होती जा रही है। वृद्धजनों के साथ प्रेम, सम्मान, प्रतिष्ठा आदि देने तथा उनके साथ सहानुभूतिपूर्वक व्यवहार एवं अन्तःक्रिया करने के स्थान पर युवा पीढ़ी वृद्धजनों के अनुभवों से दूर होता जा रहा है। ऐसे में यह जानना नितांत आवश्यक है कि वृद्धजनों की समस्याएँ और उनके कारण क्या हैं। संयुक्त परिवार के विघटन के कारण वृद्धजनों की पारम्परिक सत्ता का विघटन हो रहा है। संयुक्त परिवार में संरचनात्मक-प्रकार्यात्मक परिवर्तन हुआ है। पहले परिवार के वृद्ध मुखिया का निर्णय सम्मानपूर्वक शिरोधार्य होता था। परन्तु आज युवा पीढ़ी स्वच्छन्द विचारों से ओतप्रोत है। वृद्ध माता-पिता, दादी-दादा आदि परिवार में रहकर भी असहज और असुविधाजनक जीवन जीने के लिए अभिशप्त हैं। व्यक्तिवादी, उपयोगितावादी एवं स्वार्थवादी स्वभाव के कारण युवा पीढ़ी में वृद्धजनों के पालन-पोषण को घाटे का सौदा मानने की प्रवृत्ति बढ़ रही है।

परिवर्तन प्रकृति का स्वाभाविक नियम है। मानव जीवन प्रकृति का एक अभिन्न अंग है, जो जन्म, जरा और मरण की स्वाभाविक प्रक्रिया को स्वयं में समेटे हुए है। मानव जीवन की चार अवस्थाएँ हैं- वाल्यावस्था, युवावस्था, प्रौढ़ावस्था और वृद्धावस्था। जैविक, मनोवैज्ञानिक, और सामाजिक अर्थों में इस अवस्था की समस्याओं को अनेक रूपों में व्याख्यायित किया जाता है। यही कारण है कि वृद्धजनों की समस्याओं में इन्हीं बहुआयामी कारकों का सम्मिलित योगदान है। जैविक दृष्टिकोण से 'वृद्धावस्था' शरीर की जैव-रासायनिक परिवर्तन की वह अवस्था है, जिसमें जीवन की समस्त प्रक्रियाएँ अवसान की और अग्रसर होती हैं। यह अवस्था जीवन की संध्याबेला से प्रारम्भ होकर मृत्यु के साथ ही समाप्त होती है। जैविक वृद्धावस्था के अनेक सार्वभौम लक्षण हैं, यथा- कार्य करने की क्षमता में कमी, अनिद्रा, हृदय संबन्धी क्षमता का कम हो जाना, तंत्रिका तंत्र का कमजोर हो जाना, मूत्र तंत्र में विकार उत्पन्न हो जाना, हड्डियों का कमजोर हो जाना, इन्द्रियों की क्षमता में व्यापक ह्रास होना, बाल सफेद पड़ना, शरीर का जीर्ण-शीर्ण होना, दन्त तंत्र का कमजोर होना, पाचन शक्ति का अत्यंत कमजोर हो जाना, नेत्र विकार, अति सर्दी-गर्मी को सहने की क्षमता का ह्रास आदि। इन्हीं कारणों से वृद्धावस्था शारीरिक रूप से कष्टकारी होता है।

नए एवं पुराने मूल्यों के टकराव के कारण नई एवं पुरानी पीढ़ियों के बीच संघर्ष की उत्पन्न हुई है। नई एवं पुरानी पीढ़ियों के बीच अविश्वास, क्रोध, असमायोजन, तनाव, संघर्ष आदि के कारण न तो वृद्धजनों के लिए हितकर साबित हो रही है और न ही युवा पीढ़ी के प्रगति का मार्ग ही निष्कंटक है। ऐसी परिस्थिति में बुजुर्ग का न तो परिवार के साथ समायोजन हो पाता है और न ही समाज में। वृद्धजनों की मानसिक क्षमता में कमी के कारण अनेक समस्याएँ उनके जीवन को बहुआयामी रूप से दुष्प्रभावित करती हैं। वृद्धावस्था में अकेलापन, अलगाव, सत्ता और भूमिका का ह्रास, स्वयं को हीन समझना, मानसिक तालमेल न कर पाना आदि के कारण वृद्धजनों का जीवन कष्टमय बन जाता है। स्वयं को बेकार और कमतर आंकना और संसार में लावारिश होने की अनुभूति के कारण अस्तित्व का संकट उत्पन्न होना मनोवैज्ञानिक परिवर्तन का ही परिणाम है। उनमें प्रायः इस प्रकार की अनुभूति होती है कि उनका परिवार और समाज में कोई परवाह करने वाला नहीं है। उनमें अवसाद और जीवन के प्रति विरक्ति के भाव का उत्पन्न होना मनोवैज्ञानिक समस्याओं के ही लक्षण हैं। विश्व बन्धुत्व की अलख जगाने वाले हमारे देश भारत में वृद्धजनों की बढ़ती आबादी और जैविक, मनोवैज्ञानिक तथा सामाजिक बुढ़ापा के कल्याणार्थ अध्ययन की कमी है। सरकारी और गैर सरकारी योजनाओं की कमी, अल्प रोजगार, चिकित्सा सुविधा का अभाव, सुरक्षा के लिए व्यावहारिक और

प्रभावी कानूनों का अभाव, वृद्धजनों में जीने की कला का अभाव आदि के कारण उनकी समस्याओं के समाजशास्त्रीय अध्ययन की महती आवश्यकता है।

अध्ययन के उद्देश्य:

प्रस्तुत अध्ययन में 60 या अधिक उम्र के व्यक्तियों की समस्याओं समग्र अध्ययन करना है। प्रस्तुत अध्ययन के प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित हैंः-

1. वृद्धजनों की विविध समस्याओं का अध्ययन करना।

2. वृद्धजनों की समस्याओं के निदानार्थ आवश्यक सुझाव प्रस्तुत करना, जिससे जीवन की संध्याबेला आनंदमय हो सके।

प्रकार्यात्मक सिद्धान्त पर आधारित प्रस्तुत अनुसंधान द्वारा यह ज्ञात हो सकेगा कि वृद्धजन भी सामाजिक संरचना की इकाइयाँ हैं और इनका प्रतिष्ठित रहना स्वस्थ्य सामाजिक व्यवस्था एवं सामाजिक संरचना के लिए नितांत आवश्यक है। एक स्वस्थ समाज में प्रत्येक सामाजिक व्यक्ति का योगदान सामाजिक ताने-बाने के धारणीय प्रगति के लिए अपरिहार्य है।

जीवन की संध्याबेला में वृद्धजनों की प्रमुख समस्याएँः-

1. सामाजिक समस्याएँ:

आज भौतिकता एवं स्वार्थपरक दृष्टिकोण की परिणति उपभोक्तावादी संस्कृति के स्वीकरण में हो रही है। समाज में वृद्धजनों के प्रति सम्मान एवं प्रतिष्ठा का अवनमन हो रहा है। विविध शोधों एवं अध्ययनों से यह स्पष्ट है कि वृद्धजनों का उन लोगों के साथ समायोजन एवं अन्तःक्रिया करने में सुगमता होती है जो उनकी भावनाओं का सम्मान करते हैं। यह कहा जाता है कि जीवन की संध्याबेला उन व्यक्तियों के लिए समस्यात्मक है जो स्वयं को इस अवस्था के लिए पूर्व में तैयार नही ंकर लेतें हैं। अकेलेपन और अलगाव के कारण वृद्धजनों का सामाजिक जीवन व्याधिग्रस्त बनता जा रहा है। वृद्धजनों की उचित देखभाल होने के साथ-साथ उनके अनुभवों से भावी पीढ़ी को मार्गदर्शन और प्रेरणा लेने की आवश्यकता है। आर्थिक विपन्नता, दैहिक अस्वस्थता, एवं असमायोजन वृद्धजनों की समस्याओं में प्रमुख हैं। हीनता की भावना और असामंजस्यपूर्ण व्यक्तित्व के कारण जहाँ एक ओर उनके दुःख की तीव्रता में वृद्धि होती है तो दूसरी ओर युवा पीढ़ी से उनके अलगाव को बढ़ावा मिलता है। आज के भौतिकवादी मूल्यों के परिवेश में भारत के परंपरागत एवं प्राचीन अंतरपीढ़ीगत सामंजस्य का दर्शन दुर्लभ हो गया हैं। उपेक्षा के कारण वृद्धजनों में दीनता और हीनता के भावना में वृद्धि हो रही है। वृद्धजन कमजोरी, बीमारी, निराशा तथा अकेलापन की भावना से व्यथित हो जाते हैं। विस्तृत और संयुक्त परिवार का स्थान नाभिकीय और जनतांत्रिक परिवार लेते जा रहे हैं। कुछ वृद्धजन ऐसे भी हैं जो परिवार, समाज और परिस्थितियों से सफलतापूर्वक समायोजन कर लेते हैं। इन वृद्धों के विरुद्ध परिवार और समाज की नकारात्मक भूमिका नहीं होती है तथा ऐसे बुजुर्ग संतुलित विचारों के होते हैं।

आर्थिक समस्याएँ:

आधुनिकीकरण, तकनीकी परिवर्तन और गतिशीलता के कारण लोगों के जीने के तौर-तरीकों और मूल्यों में परिवर्तन हुआ है। इन परिवर्तनों के कारण वृद्धजनों के प्रति आदर भाव कम हुआ है। नई पीढ़ी अपने प्रजननमूलक परिवार पर ही अपनी आमदनी का अधिकतर भाग खर्च को आवश्यक और परिवार के वृद्धजनों पर व्यय को अनावश्यक मानती है। कुछ वृद्धजन आर्थिक सहायता के अभाव में भिक्षाटन को मजबूर हैं। नई पीढ़ी परिवार के वृद्धजनों से अलग रहना चाहती है। 'माता-पिता' ने अपनी जिन संतति के परवरिश के लिए स्वयं की सुख-सुविधाओं की तिलांजलि दे दी, आज वही संतानें माता-पिता को भार समझने की भूल कर रहीं हैं। भारत में वृद्धजनों की एक बड़ी फौज न्यून आर्थिक स्तर पर जीवन जीने को मजबूर है। परंपरागत जीवन व्यतीत करने वाले वृद्धों में वंचना और दुख-दैन्य का स्तर सेवानिवृत्त वृद्धजनों की तुलना में कम होती है। पुनश्च, पेंशनयुक्त सेवानिवृत्त वृद्धजनों का मनोदैहिक स्वास्थ्य अच्छा देखा गया है। नई पीढ़ी अपने बच्चों के लालन-पालन पर व्यय को आवश्यक और अपने बूढ़े माता-पिता की उचित देखभाल करने में घाटे का सौदा मानती है। अतः वृद्धजनों का आर्थिक रूप से संपन्न होना उनके सुरक्षित एवं सुखमय बुढ़ापे के लिए एक महत्त्वपूर्ण एवं प्रभावशाली कारण है।

रुग्णता की समस्याएँ:

स्वास्थ्य होने का अर्थ निरोगी और सशक्त होना ही न होकर शारीरिक, मानसिक और सामाजिक रूप से सुखद होने की स्थिति का द्योतक है। वृद्धावस्था में स्वस्थ रहना व्यक्ति के जीवनशैली तथा आदतों पर भी निर्भर करता है। ऐसे वृद्धजन जो

आर्थिक रूप से विपन्न हैं, उनको संतुलित आहार और स्वास्थ्य की उचित देखभाल से वंचित पाया गया है। जीवन की सांध्यबेला में अस्वस्थता के कारण असमायोजन, अवसाद, और मानसिक विदलन की समस्या उत्पन्न हो रही है। ऐसी दशा में जीवन की सांध्याबेला में वृद्धजनों को शारीरिक, मानसिक, आर्थिक और स्वास्थ्यपरक सहायता की आवश्यकता है। अच्छा मनो-दैहिक स्वास्थ्य, व्यायाम, संतुलित एवं सुपाच्य आहार, सामाजिक सामंजस्य और अच्छा आर्थिक स्तर खुशहाल वृद्धावस्था के लिए अत्यावश्यक है। एक अध्ययन के अनुसार वृद्धावस्था में हृदयपरक रोग, आँत संबंधी बीमारी, मूत्रतंत्र की बीमारी, अवसाद, श्वसन संबंधी बीमारी, रक्तचाप की अनियमितता, दृष्टि-श्रवण संबंधी रोग, अस्थिपरक कमजोरी आदि की आवृत्ति बढ़ जाती है। मात्र सुखद आर्थिक दशा से वृद्धजनों के सुखद जीवन की गारंटी नहीं मिलती है, अपितु परिवार के साथ सकारात्मक एवं भावनात्मक अन्तःक्रिया से वृद्धजनों के मनोदैहिक स्वास्थ्य पर सुखद प्रभाव डालता है।

मनोवैज्ञानिक और समायोजन की समस्याएँ:

एकाकीपन, अवसाद, कुसमायोजन, विवशता, याददाश्त का कम होना, नकारात्मक मनोदशा, परिवार एवं समाज से अलगाव, कर्त्तव्यों का अवनमन आदि अनेक मनोसमस्याएँ है। परिवार, पड़ोस एवं समाज में वृद्धजनों का समायोजन कठिन हो जाना एक गम्भीर मनोवैज्ञानिक समस्या है। वृद्धजनों की अस्वस्थता के कारण जहाँ एक ओर मानसिक क्षमता में कमीं आती है तो दूसरी ओर उनमें किंकर्त्तव्यविमूढ़ता, असहायता, हीनता और चिंता की भावना प्रभावी हो जाती है। आधुनिक परिवर्तनों के कारण वृद्धजनों का परिवार और समाज के साथ सम्यक् समायोजन नहीं हो पा रहा है। अनेक वृद्धजन इस बात से अप्रसन्न हैं कि संताने उनकी कदम-कदम पर उपेक्षा और अपमान करतीं हैं। ऐसे में शारीरिक-मानसिक रूप से कमजोर वृद्धजनों को परिवार के सदस्यों से सहयोग की अपेक्षा होती है। वांछित सहयोग नहीं मिलने से वृद्धजनों की समस्याओं में वृद्धि हो जाती है। उचित समाजीकरण के अभाव एवं उपभोक्तावादी संस्कृति के आलिंगन के कारण संतति बुज़र्गों के साथ असहज व्यवहार कर रही हैं।

निष्कर्ष एवं सुझाव:

आज के वैश्विक परिवेश में वृद्धजनों की बढ़ती आबादी चिंता का विषय बना है। परिवर्तित जनांकिकी की दिशा और दशा के कारण सामाजिक, आर्थिक आदि क्षेत्रों में अनेक चुनौतियाँ प्रस्तुत हुई हैं। भारत में वैज्ञानिक प्रगति, नगरीकरण, औद्योगीकरण, आधुनिकीकरण और लौकिकीकरण के कारण समाज के परम्परागत मूल्यों में परिवर्तन हुआ है, नाभिकीय परिवार का प्रचलन बढ़ा है तथा जीवन प्रत्याशा में वृद्धि हुई है, नई और पुरानी पीढ़ी के बीच तनाव और बढ़ा है। इन सभी परिवर्तनों के समग्र प्रभाव की परिणति वृद्धजनों की सेवा-सुश्रूषा का न हो पाना, वित्तीय असुरक्षा, परिवार-समाज के साथ असामंजस्य आदि समस्याओं के रूप में हुई है। आधुनिक सुविधाओं में वृद्धि के कारण आने वाले समय में जहाँ एक ओर उनकी आबादी में वृद्धि होगी, वहीं दूसरी ओर उनकी समस्याएँ भी बढ़ती जायेंगी। इस प्रकार वृद्धजनों की समस्याओं पर विचार और निदान के लिए पारिवारिक, सामाजिक, गैर-सरकारी और सरकारी स्तर पर समग्र प्रयास की आज की महती आवश्यकता है।

संयुक्त परिवार से विघटित नाभिकीय परिवारों में भावनात्मक, शारीरिक और आर्थिक सुरक्षा नहीं मिल पाने के कारण बुज़ुर्गों के समक्ष अनेक जैविक, मनोवैज्ञानिक और सामाजिक समस्याएँ उनकी उत्तरजीविता के लिए विकट चुनौती प्रस्तुत कर रहीं हैं। नई पीढ़ी अपने प्रजननमूलक परिवार के देखभाल के बोझ को तो सहर्ष उठा लेता है, परन्तु अपने ही जनक-जननी और पालकों की देखभाल को आर्थिक लाभ-हानि की दृष्टि से बोझ समझ रही है। पूर्व औद्योगिक समाज में वृद्धजनों की देखभाल परिवार में ही हो जाया करती थी। वृद्धजन अपने परिवार में रक्त और वैवाहिक संबन्धियों के साथ सक्रिय जीवन व्यतीत करते थे। प्रतिष्ठित प्रस्थिति और सम्मान जनक भूमिका के कारण उनकी परम्परागत सत्ता को परिवार और समाज में वैधता प्राप्त थी। सक्रियता के कारण वे शारीरिक-मानसिक रूप से स्वस्थ्य हुआ करते थे।

वृद्धावस्था जीवन की नैसर्गिक अवस्था है। वृद्धावस्था को सुरक्षित बनाने का दायित्व संपूर्ण समाज की है। बेबस और निराश वृद्धावस्था मानवीय कल्याण के मार्ग में एक बहुत बड़ी चुनौती है। आर्थिक बदहाली, परतंत्रता, नई पीढ़ी के साथ असमायोजन, नई पीढ़ी में उपभोक्तावादी संस्कृति की प्रधानता, सरकारी-गैर सरकारी स्तर पर वृद्धजनों के कल्याणार्थ प्रयासों में कमी आदि के कारण वृद्धजनों के जीवन की संध्याबेला अनेक समस्याओं के दुष्चक्र में उलझा हुआ है। 'वृद्धावस्था अध्ययन शास्त्र' को प्राथमिक स्तर पर ही शिक्षा का अभिन्न अंग बनाया जाना नितांत आवश्यक है जिससें आधारभूत स्तर पर ही कल्याणकारी जीवन मूल्यों को सुरक्षित रखने के लिए नई पीढ़ी का नैतिक उत्थान किया जा सके। वृद्धजनों को अनिवार्य और निःशुल्क चिकित्सा की सुविधा प्रदान प्रदान कराया जाय। वृद्धजनों के कल्याणार्थ योजनाओं को बनाने और लागू करने के लिए सरकार को चाहिए कि ऐसे प्रतिनिधित्वपूर्ण समिति बनाए जिसमें वृद्धजनों की व्यापक और प्रभावी भागीदारी हो। वृद्धजनों की सेवा और देखभाल

करने के लिए संतानों को कानूनी रूप से बाध्यकारी बनाया जाय। संवैधानिक रूप से वृद्धजनों के अधिकारों की रक्षा के प्रावधान को व्यावहारिक रूप से प्रभावी बनाने की आवश्यक है।

पुनश्च, युवा पीढ़ी और वृद्धजनों के बीच का संबंध 'अधिकार और कर्त्तव्य के संतुलन' पर आधारित होना चाहिए। वृद्धजनों के कल्याणार्थ परिवार और समाज में स्वस्थ जनमत एवं चेतना को जाग्रत करने की आवश्यकता है। जब व्यक्ति की उम्र बढ़ती है तो उसे वरिष्ठ बनना चाहिए न कि बूढ़ा क्यांकि बुढ़ापा दूसरों में सहारा ढूढ़ता है, जबकि वरिष्ठता दूसरों को सहारा देती है। 'ओल्ड एज' को छुपाने का जबकि 'सीनियारिटी' को उजागर करने का मन कहता है। अतः वृद्धावस्था में व्यक्ति के मन में 'वरिष्ठता' का भाव होने से मानसिक संतुष्टि का प्रादुर्भाव होगा। प्रातः भ्रमण, व्यायाम, सृजनात्मकता, सहिष्णुता, निःस्वार्थ सेवाभाव, सक्रियता, घर-पड़ोस के सदस्यों से स्वस्थ अनतःक्रिया, बुढ़ापे की पूर्व तैयारी कर लेना, प्रेरणादायी धार्मिक पुस्तकों को सुनना एवं पढ़ना, कमाई का कुछ भाग बचा कर रखना, नित्य व्यायाम और परिवार के साधारण कार्यों को करके स्वयं को व्यस्त रखना आदि के कारण सुखद बुढ़ापा आविर्भाव होगा।

वृद्धावस्था की सामाजिक, आर्थिक, मनोवैज्ञानिक, समायोजनपरक, स्वास्थ्यपरक आदि समस्याएँ जीवन की सांध्यबेला को मज़बूर और मज़लूम बनाने में अहम् भूमिका अदा करतीं हैं। शारीरिक-मानसिक स्वास्थ्य, सामंजस्य, आर्थिक स्वतंत्रता और संपन्नता से जीवन के चौथेपन की समस्या को न्यून किया जा सकता है। नई और पुरानी पीढ़ियों को विचारों में लोचशीलता लाने और एक-दूसरे के प्रति सकारात्मक भूमिका के संपादन की आवश्यकता है। वृद्धजनों की समस्याओं के कारणों और निदान की खोज के लिए समाजशास्त्रियों, समाजकार्य विशेषज्ञों, स्वास्थ्य विशेषज्ञों, मनोवैज्ञानिकों, अर्थशास्त्रियों, शासको-प्रशासकों, नीति निर्धारकों, योजनाकारों आदि के संयुक्त प्रयास की आवश्यकता है। इनकी समस्याओं के निदानार्थ सक्षम एवं व्यावहारिक कानूनी पहल की आवश्यकता है, जो वृद्धजनों की सम्यक् सुरक्षा के लिए व्यक्ति, परिवार, समाज और सरकार की भूमिका को दिशा दे सके। सुपाच्य एवं संतुलित आहार, अच्छा शारीरिक-मानसिक स्वास्थ्य, सुखद परिवेश, अन्तरपीढ़ीगत सौहार्द तथा बेहतर आर्थिक दशा खुशहाल वृद्धावस्था के लिए अत्यन्त आवश्यक है।

संदर्भ ग्रंथ सूचीः

1. अटल, योगेश (2016), भारतीय समाज नैरन्तर्य एवं परिवर्तन दिल्ली।

2. प्रदीप कुमार, धर्मेन्द्र प्रताप सिंह ''प्रोब्लेम्स ऑफ दी एजेड इन इंडिया'' इन इंडियन जर्नल ऑफ सोशल रिशर्च, 2008; 49:3

3. हल्दर, अरुणा 1998: ''ओल्ड एजः एनसियंट एण्ड मॉडर्न टाइम्स'' इन एजेइंग एण्ड सोसायटीः इंडियन जर्नल ऑफ जेरोन्टोलॉजी, वोल. 8, नं. 3-4, जुलाई-दिसम्बर।

4. बालकृष्ण 1986: ''ओल्ड एज प्रॉब्लेम्स इन दी पर्सपेक्टिव ऑफ एज ट्रेट्स'' इन वर्ल्ड कांग्रस ऑफ दी इंटरनेशनल सोसियोलॉजिकल एसोसिएशन (11वाँ, अगस्त 18-22, नई दिल्ली) प्रोसीडिंग्स।

5. रंजन, रेनू, 1986. ''एजिंग ईश्यूस इन इंडिया (विथ स्पेशल रेफरेंश टू बिहार)'' इन वर्ल्ड कांग्रेस ऑफ दी इंटरनेशनल सोशियोलोजिकल एसोसिएशन (11 अगस्त 18-22. न्यू दिल्ली), पेपर्स।

6. रामनाथ, राजलक्ष्मी 1989: ''प्रॉब्लेम्स ऑफ दी एजेड'' इन पाती, आर.एन. एण्ड जेना, बी. (ईडीएस.) एजेड इन इंडियाः सोशियो-डिमोग्राफिक डाइमेंशन; नई दिल्ली, आशीष, पेज।

7. कोहली, डी.आर. 1987: ''चैलेंज ऑफ एजिंग'' इन शर्मा, एम.एल. एण्ड डाक, टी. एम. (ईडीएस.) एजिंग इन इंडियाः चैलेंज फॉर दी सोसायटी; दिल्ली, अजंता।

8. वाखरे, एम.एम. 1995: ''इंटरनेशनल ईयर ऑफ दी फेमिलीः इंडिया एण्ड दी एजेड (60 एण्ड अबव)'' इन वन्यजाति, वोल. 43, नं0 4, जनवरी, पेज।

9. https://hi.m.wikipedia.org>wiki.

10. भाटिया, एच.एस., 1983. एजिंग एण्ड सोसायटीः ए सोशियोलॉजिकल स्टडी ऑफ रिटायर्ड पब्लिक सर्वेंट्सः उदयपुर, आर्यास बुक सेन्टर।

11. नयर, पी.के.बी. 1990: प्रॉब्लेम्स एण्ड नीड्स ऑफ दी एजेड इन इंडिया'' इन वर्ल्ड कांग्रेस ऑफ सोश्यिलॉजी (जुलाई 9-13, स्पेन) पेपर्स ।

12. नटराजन, वी.एस. 1995: एजिंग व्युटिफुली; मद्रास शक्ति पथिपगम।

13. पाठक, जे.डी., 1982 ''हेल्थ प्रॉब्लेम्स ऑफ दी एजेड इन इंडिया'' इन देसाईष् के.जी. (ईडी.), एजिंग इन इंडिया; बाम्बे, टाटा इंस्टीट्यूट ऑफ सोशल साइंसेज।

14. राममूर्ति, पी.वी., 1970. ''लाइफ सैटिसफैक्शन इन दी ओल्डर ईयर्स'' इन इंडियन जर्नल ऑफ जीरेन्टोलॉजी, वोल. 2, नं. 3-4, जुलाई-अक्टूबर।

15. पीटर, टॉन्सेण्ड 1957: दी फेमिली लाइफ ऑफ ओल्ड पीपल।

16. कुमार, पी. एण्ड सिंह, डी.पी., 2008. ''प्रॉब्लेम ऑफ दी एजेड इन इंडिया'' इन इंडियन जर्नल ऑफ सोशल रिशर्च, 49:6।

17. मोहन्ती, 1989 ''रिटायर्ड गवर्नमेन्ट सर्वेन्ट्स एण्ड दीयर प्रॉब्लेम्स ऑफ सोशियो साइकोलॉजिकल एडजस्टमेन्ट'' इन पाती, आर.एन.एण्ड जेना. बी. (ईडीएस.), एजेड इन इंडियाः सोशियो डिमोग्राफिक डाइमेन्शन्स; नई दिल्ली, आशीष।

18. नायर, पी.के.बी. 1980: ए स्टडी ऑफ दी वर्किंग ऑफ ओल्ड एज पेंशन स्कीम इन केरल; रिसर्च रिपोर्ट, न्यू दिल्ली, डिपार्टमेंट ऑफ सोशल वेलफेयर।